पूर्ण न्यायपीठ

D. ***K.*** Maha]an, B. R. Tuli and P. C. Jain,न्यायमूर्ति

आय-कर का आयुक्त,-- आवेदक,

बनाम

एम/एस। रोशन लाल कुथियाला,-प्रतिवादी।

आयकर संदर्भ सं. 3 1971 का।

21 फरवरी, 1972।

आयकर अधिनियम (1961 का 13)-धारा 271 और 297-आयकर अधिनियम (1922 का 11)-धारा 34-1 अप्रैल, 1962 से पहले के निर्धारण वर्ष के संबंध में की गई चूक-ऐसी तिथि के बाद पूरा किया गया निर्धारण-चूक के लिए दंड का अधिरोपण-क्या आयकर अधिनियम, 1961 में निर्धारित दर परदंड का प्रावधान करने वाले अधिनियम की धारा 271 (1) (ए) का पर्याप्त भाग-क्या इसका पूर्वव्यापी संचालन है।

अभिनिर्धारित किया गया कि भारतीय आयकर अधिनियम, 1922 को आयकर अधिनियम, 1961 की धारा 297 की उपधारा (1) द्वारा निरसित किया गया है और इसकी उपधारा (2) अधिनियम के निरसित होने के परिणामस्वरूप विभिन्न मामलों के लिए उपबंध करती है। दंड अधिरोपित करने का उपबंध धारा 297 की उपधारा (2) के उपखंड (च) और (छ) में किया गया है। खंड (च) के अनुसार 1 अप्रैल, 1962 से पहले पूर्ण किए गए किसी निर्धारण के संबंध में दंड अधिरोपित करने के लिए कोई कार्यवाही आरंभ की जानी चाहिए और ऐसा दंड 1922 के अधिनियम के उपबंधों के अनुसार लगाया जाना चाहिए, जिसमें 1961 के अधिनियम की पूरी तरह उपेक्षा की गई हो। तथापि, जहां निर्धारण 31 मार्च, 1962 को समाप्त होने वाले किसी निर्धारण वर्ष के लिए 1 अप्रैल, 1962 के बाद पूरा किया गया है; या किसी पूर्ववर्ती वर्ष के लिए, दंड के लिए कार्यवाहियां आरंभ की जानी हैं और 1961 अधिनियम के अधीन दंड अधिरोपित किया जाना है जिसका अर्थ है कि न केवल उसमें विहित प्रक्रिया का पालन किया जाना है अपितु दंड की मात्रा विहित करने वाले इसके मूल उपबंधों के अनुसार अधिरोपित किया जाना है। यदि दंड अधिरोपित करने के लिए केवल 1961 के अधिनियम के प्रक्रियात्मक उपबंधों का अनुसरण करने का आशय था और दंड की मात्रा 1922 के अधिनियम के उपबंधों के अनुसार नियत की जानी थी, तो विधायिका ने इसके लिए स्पष्ट रूप से उपबंध किया होगा जैसा कि धारा 297 की उपधारा (2) के खंड (ख) में किया गया है। यदि धारा 297 के खंड (च) और (छ) की भाषा की तुलना की जाती है, तो यह स्पष्ट है कि खंड (च) में लागू अधिनियम केवल 1922 अधिनियम है और 1961 अधिनियम को बाहर रखा गया है, जबकि विपरीत मामला खंड (छ) में है, अर्थात केवल 1961 अधिनियम लागू किया गया है और 1922 अधिनियम को बाहर रखा गया है। इस प्रकार यह निम्नलिखित है कि 1 अप्रैल, 1962 से पहले के किसी निर्धारण वर्ष के संबंध में किए गए चूक के संबंध में जुर्माना, जिसके संबंध में निर्धारण उस तिथि के बाद पूरा किया जाता है, 1961 के अधिनियम के तहत लगाया जाना है, अर्थात जुर्माना 1961 के अधिनियम में निर्धारित दर और प्रक्रिया के अनुसार लगाया जाना है और जैसा कि 1922 के अधिनियम में निर्धारित किया गया है, उस तारीख के बावजूद, जिस पर विवरणी दाखिल की गई थी या चूक के आयोग की तारीख जिसके लिए जुर्माना लगाया जा सकता है। अतः दंड का प्रभार सृजित करने वाले 1961 के अधिनियम की धारा 271 (1) (क) के मूल भाग का पूर्वव्यापी प्रवर्तन है।

आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण (चंडीगढ़ पीठ) द्वारा आयकर अधिनियम, 1961 की धारा 256 (1) के तहत संदर्भ-23 अक्टूबर, 1970 के अपने आदेश को R.A. No. 1970-71 का 9, I.T.A से उत्पन्न होने वाले

कानून के निम्नलिखित प्रश्न की राय के लिए इस न्यायालय को। नं. निर्धारण वर्ष 1960-61 के संबंध में 1967-68 का 18747.

"क्या आयकर अधिनियम, 1961 की धारा 271 (1) (क) का मूल भाग, जो जुर्माने का आरोप लगाता है, स्पष्ट कथन या स्पष्ट निहितार्थ के अभाव में पूर्वव्यापी कार्रवाई करता है।

निर्णय

इस न्यायालय का निर्णय इस प्रकार दिया गयाः-बी. आर. तुली, न्यायमूर्ति--- निर्धारिती एक पंजीकृत फर्म है जिसका मुख्य कार्यालय यमुनानगर में है। यह वनों के दोहन के व्यवसाय में लगा हुआ है। निर्धारण वर्ष 1960-61 (31 मार्च, 1960 को समाप्त होने वाले लेखा वर्ष) के लिए आयकर अधिकारी ने भारतीय आयकर अधिनियम, 1922 की धारा 22 (2) के अधीन निर्धारिती को 7 अक्टूबर, 1960 को एक सूचना तामील की जिसमें उससे 11 नवंबर, 1960 तक अपनी आय की विवरणी प्रस्तुत करने की अपेक्षा की गई थी। निर्धारिती के अनुरोध पर, इस समय को 20 अप्रैल, 1961 तक बढ़ा दिया गया था। हालाँकि, रिटर्न 1 जनवरी, 1963 को दाखिल किया गया था, यानी बीस महीने से थोड़ी अधिक की देरी के बाद। आकलन आदेश 24 मार्च, 1965 को पारित किया गया था, और कर के लिए उत्तरदायी आय का आकलन रु। 81, 346। चूंकि निर्धारिती यह साबित नहीं कर सका कि आय विवरणी दाखिल करने में देरी एक पर्याप्त कारण के लिए थी, इसलिए आयकर अधिकारी ने आयकर अधिनियम, 1961 (इसके बाद '1961 अधिनियम' के रूप में संदर्भित) के प्रावधानों के तहत जुर्माना लगाने के लिए कार्यवाही की। जुर्माने की गणना उक्त अधिनियम की धारा 271 (1) (क) के खंड (i) के प्रावधानों के अनुसार की गई थी, अर्थात प्रत्येक विलंब माह के लिए आय-कर के 2 प्रतिशत की दर से, कुल आय-कर का 40 प्रतिशत होने का आकलन किया गया क्योंकि विलंब बीस पूर्ण महीनों से अधिक का था। यह आदेश आयकर अधिकारी द्वारा 20 मार्च, 1967 को पारित किया गया था। निर्धारिती ने उस आदेश के खिलाफ अपील दायर की जिसे 23 नवंबर, 1967 को अपीलीय सहायक आयकर आयुक्त द्वारा खारिज कर दिया गया था। आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण, चंडीगढ़ पीठ के समक्ष एक और अपील दायर की गई, जिसे आंशिक रूप से स्वीकार कर लिया गया। अधिकरण ने यह अभिनिर्धारित किया कि धारा 271 (1) (क) (i) के अधीन यथा उपबंधित 2 प्रतिशत की दर से जुर्माना 1 अप्रैल, 1962 से 31 दिसंबर, 1962 तक की अवधि के लिए, अर्थात् केवल नौ मास के लिए, इसलिए अधिरोपित किया जा सकता है क्योंकि 1961 का अधिनियम 1 अप्रैल, 1962 से प्रभावी हुआ था और उसकी धारा 271 के उपबंध उस तारीख से पहले हुई चूक पर लागू नहीं किए जा सकते थे। 1 अप्रैल, 1962 से पहले के ग्यारह महीनों की अवधि के लिए, अधिकरण ने 1922 के अधिनियम की धारा 28 के अधीन दंड के रूप में निर्धारित कर का केवल 7 प्रतिशत इस आधार पर अधिरोपित करने में अपने विवेकाधिकार का प्रयोग किया कि वह उपबंध उस अवधि के लिए लागू होता है। ट्रिब्यूनल ने तदनुसार जुर्माने की मात्रा को निर्धारित कर के 40 प्रतिशत से घटाकर 25 प्रतिशत कर दिया। उस आदेश से संतुष्ट न होते हुए, आयकर आयुक्त ने इस न्यायालय को दिए जा रहे कानून के निम्नलिखित प्रश्न का संदर्भ देने के लिए कहाः-

"क्या तथ्यों और मामले की परिस्थितियों पर, न्यायाधिकरण आयकर अधिनियम, 1961 की धारा 271 (1) (ए) के तहत दंड को 40 प्रतिशत से घटाकर 25 प्रतिशत करने के लिए कानूनी रूप से उचित था?"

(2) अधिकरण ने, तथापि, प्रश्न के रूप को बदल दिया है और विधि के निम्नलिखित प्रश्न को राय के लिए इस न्यायालय को निर्दिष्ट किया हैः-

"क्या आयकर अधिनियम, 1961 की धारा 271 (1) (क) का मूल भाग, जो दंड का प्रभार सृजित करता है, स्पष्ट कथन या स्पष्ट निहितार्थ के अभाव में पूर्वव्यापी कार्रवाई करता है?"

यह निर्देश मेरे विद्वान भाइयों, महाजन और सोधी, न्यायाधीशों के समक्ष सुनवाई के लिए आया और विद्वान न्यायाधीशों ने यह निर्देश देते हुए प्रसन्नता व्यक्त की कि निर्देश को पूर्ण पीठ के समक्ष निर्णय के लिए रखा जा सकता है क्योंकि निर्धारिती के विद्वान वकील ने आयकर आयुक्त, पंजाब, हरियाणा, जम्मू और कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और चंडीगढ़, पटियाला बनाम एम/एस में इस न्यायालय के खंड पीठ के फैसले की शुद्धता पर संदेह किया था। कृपा राम-राधा किशन (आयकर संदर्भ सं. 1968 का 11) जो आयकर आयुक्त पंजाब बनाम मुंशी राम-तिलक राज (1) के परिशिष्ट के रूप में मुद्रित है और इस प्रकार इस मामले को निर्णय के लिए इस पीठ के समक्ष रखा गया है।

(3) इस मामले का विनिश्चय करने के लिए, 1961 के अधिनियम की धारा 297 के उपबंधों को निर्धारित करना आवश्यक है क्योंकि उस धारा की उपधारा (2) के खंड (छ) का निर्वचन शामिल हैः - 297 (1) भारतीय आय-कर अधिनियम, 1922 (1922 का 11) इसके द्वारा निरसित किया जाता है।

(2) भारतीय आय-कर अधिनियम, 1922 (1922 का 11) के निरसन के होते हुए भी (जिसे इसके पश्चात् निरसित अधिनियम के रूप में निर्दिष्ट किया गया है-

(क) जहां किसी व्यक्ति द्वारा किसी निर्धारण वर्ष के लिए इस अधिनियम के प्रारंभ से पूर्व आय विवरणी फाइल की गई है, वहां उस वर्ष के लिए उस व्यक्ति के निर्धारण के लिए कार्यवाही इस प्रकार की जा सकती है जैसे कि यह अधिनियम पारित नहीं किया गया था;

(ख) जहां इस अधिनियम के प्रारंभ के पश्चात् आय विवरणी फाइल की गई है, अन्यथा 31 मार्च, 1962 को समाप्त होने वाले निर्धारण वर्ष के लिए किसी व्यक्ति द्वारा निरसित अधिनियम की धारा 34 के अधीन सूचना के अनुसरण में, उस वर्ष के लिए उस व्यक्ति का निर्धारण इस अधिनियम में विनिर्दिष्ट प्रक्रिया के अनुसार किया जाएगा।

(ग) इस अधिनियम के प्रारंभ पर किसी आयकर प्राधिकारी, अपीलीय अधिकरण या किसी न्यायालय के समक्ष लंबित किसी कार्यवाही को अपील, निर्देश या पुनरीक्षण के रूप में जारी रखा जाएगा और इस प्रकार निपटाया जाएगा मानो यह अधिनियम पारित नहीं किया गया था;

(घ) जहां 31 मार्च, 1940 को समाप्त होने वाले वर्ष के पश्चात् किसी निर्धारण वर्ष के संबंध में-(i) निरसित अधिनियम की धारा 34 के अधीन इस अधिनियम के प्रारंभ से पूर्व सूचना जारी की गई थी, वहां ऐसी सूचना के अनुसरण में कार्यवाही जारी रखी जा सकती है और इस प्रकार निपटाई जा सकती है मानो यह अधिनियम पारित नहीं किया गया था;

(ii) कर से प्रभार्य कोई आय धारा 147 में उस पद के अर्थ के भीतर निर्धारण से छूट गई थी और ऐसी किसी आय के संबंध में निरसित अधिनियम की धारा 34 के अधीन कोई कार्यवाही इस अधिनियम के प्रारंभ में लंबित नहीं है, धारा 148 के अधीन सूचना, धारा 149 या धारा 150 में अंतर्विष्ट उपबंधों के अधीन रहते हुए, उस निर्धारण वर्ष के संबंध में जारी की जा सकती है और इस अधिनियम के सभी उपबंध तदनुसार लागू होंगे;

(ड) इस उपधारा के खंड (छ) और खंड (ञ) के उपबंधों के अधीन रहते हुए, निरसित अधिनियम की धारा 23क, 31 मार्च, 1962 को समाप्त होने वाले निर्धारण वर्ष के लिए या किसी पूर्ववर्ष के लिए किसी कंपनी या उसके शेयरधारकों के निर्धारण के संबंध में प्रभावी बनी रहेगी और निरसित अधिनियम के

उपबंध ऐसे निर्धारण से उत्पन्न होने वाले सभी मामलों पर पूरी तरह से और प्रभावी रूप से लागू होंगे मानो यह अधिनियम पारित नहीं किया गया था;

(च) 1 अप्रैल, 1962 से पूर्व पूर्ण किए गए किसी निर्धारण के संबंध में शास्ति अधिरोपित करने की कोई कार्यवाही प्रारंभ की जा सकेगी और ऐसा कोई शास्ति इस प्रकार अधिरोपित की जा सकेगी मानो यह अधिनियम पारित न किया गया हो; (छ) 31 मार्च, 1962 को समाप्त होने वाले वर्ष के लिए या 1 अप्रैल, 1962 को या उसके पश्चात् पूर्ण किए गए किसी पूर्ववर्ष के लिए किसी निर्धारण के संबंध में शास्ति अधिरोपित करने की कोई कार्यवाही प्रारंभ की जा सकेगी और ऐसा कोई शास्ति इस अधिनियम के अधीन अधिरोपित की जा सकेगी।

(ज) निरसित अधिनियम के किसी उपबंध के अधीन और इस अधिनियम के प्रारंभ से ठीक पूर्व प्रवृत्त किसी निर्धारिती द्वारा किया गया कोई निर्वाचन या घोषणा या विकल्प इस अधिनियम के संगत उपबंध के अधीन किया गया निर्वाचन या घोषणा या विकल्प समझा जाएगा;

(i) जहां इस अधिनियम के प्रारंभ से पहले पूर्ण किए गए किसी निर्धारण के संबंध में, ऐसे पूर्ण किए गए निर्धारण के तहत देय किसी राशि के भुगतान में ऐसे प्रारंभ या चूक के बाद ऐसी शुरुआत के बाद धनवापसी देय होती है, तो निर्धारिती द्वारा चूक के लिए देय धनवापसी और ब्याज पर केंद्र सरकार द्वारा देय ब्याज से संबंधित इस अधिनियम के प्रावधान लागू होंगे;

(जे) आयकर, अति-कर, ब्याज, जुर्माना या अन्यथा निरसित अधिनियम के तहत देय कोई राशि इस अधिनियम के तहत वसूल की जा सकती है, लेकिन निरसित अधिनियम के तहत ऐसी राशि की वसूली के लिए पहले से की गई किसी भी कार्रवाई पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना;

(के) निरसित अधिनियम के किसी प्रावधान के तहत किया गया कोई समझौता, नियुक्ति, अनुमोदन, मान्यता, निर्देश, अधिसूचना, आदेश या नियम, जहां तक यह इस अधिनियम के प्रावधान के अनुरूप नहीं है, प्रदान किया गया समझा जाएगा।

उपर्युक्त संबंधित प्रावधान के तहत दिया गया या जारी किया गया और तदनुसार लागू रहेगा।

(ल) धारा 60 की उपधारा (1) या निरसित अधिनियम की धारा 60क के अधीन जारी और इस अधिनियम के प्रारंभ से ठीक पूर्व प्रवृत्त कोई अधिसूचना, उस सीमा तक, जिस तक इस अधिनियम के अधीन उपबंध नहीं किया गया है, तब तक प्रवृत्त रहेगी जब तक कि केन्द्रीय सरकार द्वारा उसका निरसन नहीं किया जाता है;

(एम) जहां निरसित अधिनियम के अधीन किसी आवेदन, अपील, निर्देश या पुनरीक्षण के लिए विहित अवधि इस अधिनियम के प्रारंभ को या उससे पूर्व समाप्त हो गई थी, वहां इस अधिनियम की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि इस अधिनियम के अधीन ऐसा कोई आवेदन, अपील, निर्देश या पुनरीक्षण केवल इस तथ्य के कारण किया जा सकता है कि इसके लिए अधिक अवधि विहित की गई है या उपयुक्त प्राधिकारी द्वारा उपयुक्त मामलों में समय के विस्तार के लिए उपबंध किया गया है।

(4) इस धारा में निरसन और बचत का प्रावधान है। भारतीय आय-कर अधिनियम, 1922 को 1961 के अधिनियम की धारा 297 की उपधारा (1) द्वारा निरसित किया गया है और उपधारा (2) में उस

अधिनियम के निरसित होने से उत्पन्न विभिन्न मामलों के लिए उपबंध करने का उपबंध किया गया है। उपधारा (2) के खंड (क) के अनुसार, जहां किसी व्यक्ति द्वारा किसी निर्धारण वर्ष के लिए 1 अप्रैल, 1962 से पहले आय विवरणी दाखिल की गई है, उस वर्ष के लिए उस व्यक्ति के निर्धारण के लिए कार्यवाहियां 1922 के अधिनियम के अधीन की जानी हैं और 1961 के अधिनियम का कोई निर्देश नहीं किया जाना है। खंड (ख) के अधीन जहां 1 अप्रैल, 1962 के पश्चात् 31 मार्च, 1962 को समाप्त होने वाले निर्धारण वर्ष के लिए या किसी पूर्ववर्ष के लिए आय विवरणी फाइल की जाती है, वहां उस वर्ष के लिए उस व्यक्ति का निर्धारण 1961 के अधिनियम में विनिर्दिष्ट प्रक्रिया के अनुसार किया जाना है। यदि 1922 अधिनियम की धारा 34 के अधीन कोई सूचना 1 अप्रैल, 1962 से पहले जारी की गई थी, तो उस सूचना के अनुसरण में कार्यवाहियां 1961 अधिनियम के किसी संदर्भ के बिना 1922 अधिनियम के अनुसार जारी रखी जानी चाहिए, जैसा कि 1961 अधिनियम की धारा 297 (2) के खंड (ख) में उपबंध किया गया है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि ऊपर निर्दिष्ट सभी मामलों में 1922 के अधिनियम के मूल उपबंधों को निर्धारण किए जाने पर लागू किया जाना है, यद्यपि 1961 के अधिनियम में विनिर्दिष्ट प्रक्रिया का पालन ऊपर उल्लिखित तीन मामलों में से एक में किया जाना है। इस प्रकार विधायिका का इरादा स्पष्ट है कि उन मामलों में किए गए मूल्यांकन पर कानून का कौन सा प्रावधान लागू होना है। दंड अधिरोपित करने का उपबंध धारा 297 की उपधारा (2) के उपखंड (च) और (छ) में किया गया है। खंड (च) के अनुसार 1 अप्रैल, 1962 से पहले पूर्ण किए गए किसी निर्धारण के संबंध में दंड अधिरोपित करने के लिए कोई कार्यवाही आरंभ की जानी चाहिए और ऐसा दंड 1922 के अधिनियम के उपबंधों के अनुसार लगाया जाना चाहिए, जिसमें 1961 के अधिनियम की पूरी तरह उपेक्षा की गई हो। तथापि, जहां निर्धारण 31 मार्च, 1962 को समाप्त होने वाले किसी निर्धारण वर्ष के लिए या 1 अप्रैल, 1962 के पश्चात् किसी पूर्ववर्ती वर्ष के लिए पूरा किया गया है, वहां जुर्माने की कार्यवाही प्रारंभ की जानी है और 1961 के अधिनियम के अधीन जुर्माना लगाया जाना है, जिसका अर्थ है कि न केवल उसमें विहित प्रक्रिया का पालन किया जाना है अपितु जुर्माने की मात्रा विहित करने वाले उसके मूल उपबंधों के अनुसार जुर्माना लगाया जाना है। यदि दंड अधिरोपित करने के लिए केवल 1961 के अधिनियम के प्रक्रियात्मक उपबंधों का अनुसरण करने का आशय था और दंड की मात्रा 1922 के अधिनियम के उपबंधों के अनुसार नियत की जानी थी, तो विधानमंडल ने इसके लिए स्पष्ट रूप से उपबंध किया होगा जैसा कि धारा 297 की उपधारा (2) के खंड (ख) में किया गया है। जब हम खंड (च) और (छ) की भाषा की तुलना करते हैं तो हम पाते हैं कि खंड (च) में लागू होने वाला अधिनियम केवल 1922 का अधिनियम है और 1961 के अधिनियम को बाहर रखा गया है जबकि इसके विपरीत खंड (छ) में मामला है अर्थात केवल 1961 का अधिनियम लागू किया गया है और 1922 के अधिनियम को बाहर रखा गया है। इस प्रकार यह निम्नलिखित है कि 1 अप्रैल, 1962 से पहले किसी निर्धारण वर्ष के संबंध में किए गए चूक के संबंध में जुर्माना, जिसके संबंध में निर्धारण उस तारीख के बाद पूरा किया जाता है, 1961 के अधिनियम के तहत लगाया जाना है, अर्थात जुर्माना 1961 के अधिनियम में निर्धारित दर और प्रक्रिया के अनुसार लगाया जाना है, न कि 1922 के अधिनियम में निर्धारित।

(5) मेरी राय में उपरोक्त निष्कर्ष जैन ब्रदर्स और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य में सर्वोच्च न्यायालय के उनके लॉर्डशिप के निर्णय का पूरी तरह से समर्थन करता है। (2). उस मामले में निर्धारिती, मेसर्स। जैन ब्रदर्स, चार भागीदारों के साथ एक पंजीकृत फर्म थी। निर्धारण वर्ष 1960-61 (31 अक्तूबर, 1959 को समाप्त होने वाले लेखा वर्ष) के लिए 1922 अधिनियम की धारा 22 की उपधारा (2) के अधीन दिनांक 14 मई, 1960 की सूचना आयकर अधिकारी द्वारा 26 मई, 1960 को तामील की गई थी, जिसमें फर्म को सूचना की तामील के 35 दिनों के भीतर आय विवरणी प्रस्तुत करने का आह्वान किया गया था। इस प्रकार रिटर्न 30 जून, 1960 तक देय था, लेकिन इसे 18 नवंबर, 1961 को दाखिल किया

गया था। उस वर्ष के लिए मूल्यांकन 23 नवंबर, 1964 को पूरा किया गया था। उसी तारीख को, आयकर अधिकारी ने 1961 के अधिनियम की धारा 274 के साथ पठित धारा 271 के तहत नोटिस जारी किया, जिसमें निर्धारिती फर्म से यह कारण दिखाने के लिए कहा गया कि उक्त अधिनियम की धारा 271 के तहत जुर्माना लगाने का आदेश क्यों नहीं दिया जाना चाहिए क्योंकि बिना उचित कारण के कानून द्वारा आवश्यक समय के भीतर आय की विवरणी प्रस्तुत करने में विफल रहा है। निर्धारिती ने एक स्पष्टीकरण प्रस्तुत किया जिस पर विचार करने के बाद आयकर अधिकारी ने 19 नवंबर, 1966 को 1961 अधिनियम की धारा 271 की उप-धारा (1) के खंड (क) के तहत एक आदेश पारित किया। 1, 03, 434.00 1922 अधिनियम की धारा 22 की उपधारा (2) के अधीन सूचना का अनुपालन न करने के लिए। इसके बाद निर्धारिती-फर्म द्वारा उक्त आदेश के सुधार के लिए एक आवेदन दायर किया गया था, लेकिन इसे आयकर अधिकारी द्वारा 2 दिसंबर 1966 को खारिज कर दिया गया था। निर्धारिती ने अपीलीय सहायक आयुक्त के समक्ष अपील की, लेकिन इस पर निर्णय लेने से पहले, फर्म के साथ-साथ उसके भागीदारों ने 1961 के अधिनियम की धारा 297 (2) (छ) और 271 (2) के अधिकारों को चुनौती देते हुए दिल्ली उच्च न्यायालय में भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत एक याचिका दायर की, इस याचिका पर कि उन्हें राहत देने वाला एकमात्र मंच उच्च न्यायालय था, न कि आयकर अधिनियम द्वारा बनाया गया न्यायाधिकरण। उस याचिका में 23 नवंबर, 1964 को निर्धारिती-फर्म पर किए गए मूल्यांकन को रद्द करने और 19 नवंबर, 1966 को किए गए दंड को लागू करने वाले आदेश को रद्द करने के लिए एक रिट, या एक आदेश, या प्रमाणपत्र, आदेश या निषेध की प्रकृति में एक निर्देश जारी करने के लिए अनुरोध किया गया था। निर्धारिती-फर्म और उसके भागीदारों द्वारा अपनी रिट याचिका में उठाए गए मुख्य तर्कों में से एक थाः-

"जैसा कि याचिकाकर्ताओं ने 1961 के अधिनियम के 1 अप्रैल, 1962 को लागू होने से पहले 18 नवंबर, 1961 को अपना रिटर्न प्रस्तुत किया था, इसलिए याचिकाकर्ताओं पर जुर्माना केवल 1922 के अधिनियम की धारा 28 के प्रावधानों के तहत लगाया जा सकता था, न कि 1961 के अधिनियम की धारा 271 के तहत। 1922 के अधिनियम के तहत मूल्यांकन पूरा होने के बाद, जुर्माना लगाने की कार्यवाही भी उस अधिनियम के तहत हो सकती है न कि 1961 के अधिनियम के तहत। 1961 के अधिनियम की धारा 297 की उपधारा (2) के खंड (छ) के उपबंध, जिन पर राजस्व ने 1961 के अधिनियम के उपबंधों को लागू करने के लिए भरोसा किया था, संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करते हैं।"

(6) उपर्युक्त तर्क को उच्च न्यायालय के विद्वत न्यायाधीश द्वारा निम्नलिखित टिप्पणियों के साथ स्वीकार नहीं किया गया थाः-"यद्यपि जहां तक इस प्रस्ताव का संबंध है, कोई विवाद नहीं हो सकता है कि निर्धारिती के बेईमान दूषित आचरण के लिए अतिरिक्त कर का भुगतान करने का दायित्व जुर्माना है, हम याचिकाकर्ताओं की ओर से दिए गए इस तर्क को स्वीकार करने में असमर्थ हैं कि, चूंकि याचिकाकर्ताओं ने 1961 के अधिनियम के लागू होने से पहले अपना रिटर्न दाखिल किया था, इसलिए जुर्माना लगाने की कार्यवाही केवल 1922 के अधिनियम के तहत हो सकती है। धारा 297 की उपधारा (2) का खंड (क), जिस पर याचिकाकर्ताओं की ओर से निर्भरता रखी गई है, किसी व्यक्ति के निर्धारण की कार्यवाहियों से संबंधित है, जबकि खंड (च) और (छ) विशेष रूप से दंड अधिरोपित करने की कार्यवाहियों से संबंधित है। खंड (छ) यह स्पष्ट करता है कि यदि निर्धारण 1 अप्रैल, 1962 को या उसके पश्चात् पूरा किया जाता है तो कार्यवाहियां आरंभ करनी होंगी और 1961 के अधिनियम के अधीन दंड अधिरोपित करना होगा, भले ही दंड 1 अप्रैल, 1962 से पूर्ववर्ती वर्ष के निर्धारण से संबंधित हो। यह कानूनों की व्याख्या का एक अच्छी तरह से स्थापित नियम है कि एक सामान्य प्रावधान को विशेष

मामलों के लिए प्रदान किए गए विशेष प्रावधान के अनुरूप होना चाहिए। जैसा कि खंड (छ) 1 अप्रैल, 1962 को या उसके बाद पूरे किए गए निर्धारण के संबंध में दंड अधिरोपित करने के लिए कार्यवाहियों के लिए एक विशिष्ट उपबंध करता है, हमारी राय में खंड के उपबंधों के लिए कोई उपाय नहीं किया जा सकता है। (a). इसी कारण से खंड (ग) के उपबंध, जिन पर याचिकाकर्ताओं की ओर से भी निर्देश किया गया है, लागू नहीं होंगे।

(7) जिन विद्वान न्यायाधीशों ने उनके समक्ष उठाए गए अन्य दो तर्कों पर विचार किया और उनसे असहमत होकर 25 फरवरी, 1969 को रिट याचिका को खारिज कर दिया। इस फैसले को जैन ब्रदर्स और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य के रूप में रिपोर्ट किया गया है (3). उस निर्णय के विरुद्ध, उच्चतम न्यायालय में एक अपील की गई और उनके लॉर्डशिप्स ने उस अपील को खारिज कर दिया जो स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि उनके लॉर्डशिप्स ने उच्च न्यायालय के निर्णय को अनुमोदित किया कि जुर्माना 1961 अधिनियम की धारा 271 के प्रावधानों के तहत लगाया जाना था न कि 1922 अधिनियम की धारा 28 के तहत। उनके नेतृत्व के समक्ष यह तर्क दिया गया था कि यदि धारा 297 (2) (जी) की उस व्याख्या को स्वीकार कर लिया जाता है, तो यह प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन है। इस तर्क को निम्नलिखित टिप्पणियों के साथ खारिज कर दिया गयाः -

पीठ ने कहा, "अपीलार्थियों की ओर से यह निवेदन किया गया है कि धारा 297 (2) का खंड (जी) अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करता है क्योंकि यह किसी विशेष तिथि के संदर्भ में निर्धारिती के दो समूहों के बीच भेदभाव पैदा करता है, अर्थात् अप्रैल, 1962 के पहले दिन या उसके बाद मूल्यांकन कार्यवाही पूरी करना। दूसरे शब्दों में, निर्धारिती को जुर्माना लगाने के लिए दो समूहों में वर्गीकृत किया गया है; पहला समूह उन निर्धारिती का है जिनके आकलन 1 अप्रैल, 1962 से पहले पूरे हो चुके हैं। उनके मामले में, दंड लगाने की कार्यवाही शुरू की जानी चाहिए और 1922 के अधिनियम के तहत खंड (च) के तहत लगाया गया दंड) निर्धारिती के दूसरे समूह, जिसका निर्धारण अप्रैल, 1962 के पहले दिन या उसके बाद पूरा किया जाता है, को 31 मार्च, 1962 को समाप्त होने वाले वर्ष के लिए या 1961 के अधिनियम के तहत किसी भी पूर्ववर्ती वर्ष के लिए किसी भी निर्धारण के संबंध में जुर्माना लगाने के लिए आगे बढ़ना होगा। बाद के अधिनियम के तहत उनके मामले में जुर्माना भी लगाया जाना है। अतः यह सब आयकर अधिकारी की अप्रैल, 1962 के पहले दिन से पहले निर्धारण पूरा करने या 1922 के अधिनियम या 1961 के अधिनियम के उपबंधों को दंड के लिए कार्यवाहियां आरंभ करने और अधिरोपित करने के मामले में लागू करने के लिए उसके पश्चात् उसे पूरा करने की इच्छा पर निर्भर करता है। 1 अप्रैल, 1961 को या उससे पहले किए जा रहे मूल्यांकन की आकस्मिक घटना का विधान के उद्देश्य से कोई उचित संबंध नहीं है। यह भी बताया गया है कि धारा 297 (2) के खंड (ए) के तहत जहां अधिनियम, i.e., 1 अप्रैल, 1962 के प्रारंभ से पहले एक रिटर्न दाखिल किया गया है, निर्धारण के लिए कार्यवाहियां 1922 के अधिनियम के तहत ली जानी चाहिए। यदि निर्धारण 1922 के अधिनियम के तहत किया जाना था, तो खंड (च) और (छ) में निहित प्रावधानों के पीछे कोई तर्क नहीं प्रतीत होता है जो खंड द्वारा प्रदान की गई चीज़ों के साथ एक स्पष्ट असंगतता और विरोधाभास पेश करते हैं। (a). तार्किक रूप से, यह दावा किया जाता है कि जुर्माना लगाने की कार्यवाही मूल्यांकन के समान ही होनी चाहिए थी जहां आय की विवरणी दाखिल की गई है। किसी अतिरिक्त कर के रूप का दंड और इसलिए इसका अधिरोपण निर्धारण पूरा होने की तारीख पर निर्भर नहीं किया जाना चाहिए था, विशेष रूप से जब खंड (ए) और (बी) के तहत यह विवरणी दाखिल करने की तारीख है जो एक या दूसरे अधिनियम के तहत निर्धारिती से संबंधित प्रक्रिया को नियंत्रित करती है।

1922 के अधिनियम की धारा 22 (2) के अधीन, आय-कर अधिकारी किसी ऐसे व्यक्ति को, जिसकी कुल आय ऐसी राशि की थी, जिसकी अपेक्षा करता है कि वह निर्दिष्ट अवधि के भीतर पूर्ववर्ष के दौरान अपनी कुल आय का उल्लेख करते हुए विहित प्रपत्र में विवरणी प्रस्तुत करे। धारा 28 के अधीन यदि आय-कर अधिकारी, अपीलीय सहायक आयुक्त या अपीलीय अधिकरण को किसी कार्यवाही के दौरान यह समाधान हो जाता है कि कोई व्यक्ति बिना किसी उचित कारण के अपनी कुल आय की विवरणी प्रस्तुत करने में विफल रहा है, जिसे उससे धारा 22 के अधीन सूचना द्वारा प्रस्तुत करने की अपेक्षा की गई थी, तो यह निदेश दिया जा सकता है कि ऐसा व्यक्ति दंड के रूप में, उसके द्वारा संदेय आय-कर और अति-कर की रकम के अतिरिक्त, उस राशि के 10 गुना से अनधिक राशि का संदाय करेगा। उपधारा (4) में यह उपबंध किया गया है कि अपराध के लिए कोई अभियोजन उन्हीं तथ्यों के संबंध में नहीं चलाया जा सकता है जिन पर धारा के अधीन दंड अधिरोपित किया गया था। उपधारा (6) ने आयकर अधिकारी के लिए कोई जुर्माना लगाने से पहले निरीक्षण सहायक आयुक्त का पूर्व अनुमोदन प्राप्त करना अनिवार्य बना दिया। 1961 के अधिनियम में दंड से संबंधित प्रावधान अध्याय 21 में निहित हैं। धारा 271 (1) (क) विवरणी प्रस्तुत करने में विफलता से संबंधित है। यदि आयकर अधिकारी या अपीलीय सहायक आयुक्त अधिनियम के अधीन किसी कार्यवाही के दौरान संतुष्ट हो जाता है कि ऐसी चूक उचित कारण के बिना की गई है, तो वह निर्देश दे सकता है कि ऐसा व्यक्ति दंड के रूप में भुगतान करेगा, उसके द्वारा देय कर की राशि के अतिरिक्त, प्रत्येक महीने के लिए कर के 2 प्रतिशत के बराबर राशि जिसके दौरान चूक जारी रहती है, लेकिन कर के कुल 50 प्रतिशत से अधिक नहीं होगी। धारा 274 (1) में यह प्रावधान है कि जुर्माना लगाने वाला कोई आदेश तब तक नहीं दिया जाएगा जब तक कि निर्धारिती को सुना नहीं गया हो या उसे सुनवाई का उचित अवसर नहीं दिया गया हो। धारा 275 जुर्माना लगाने के लिए सीमा की अवधि निर्धारित करती है। इस तरह का आदेश कार्यवाही के पूरा होने की तारीख से दो साल की समाप्ति के बाद पारित नहीं किया जा सकता है, जिसके दौरान जुर्माना लगाने की कार्यवाही शुरू की गई है। यह उल्लेख किया जा सकता है कि अपराधों और अभियोजनों से संबंधित अध्याय XXII में धारा 276 में बिना किसी बहाने के विफलता के मामले में जुर्माने के साथ सजा के लिए एक प्रावधान किया गया है जो अधिनियम के तहत नियत समय में एक रिटर्न प्रदान करता है जो 1922 के अधिनियम की धारा 22 (2) के बराबर था। चूंकि वर्तमान मामला केवल एक वापसी करने वाले को प्रस्तुत करने में विफलता के कारण लगाए गए दंड से संबंधित है।

इस प्रकार की चूक के लिए दंड अधिरोपित करने के मामले में 1961 के अधिनियम में किए गए मुख्य परिवर्तन। 1922 के अधिनियम से पहला विचलन यह है कि 1922 के अधिनियम के तहत उन तथ्यों के संबंध में कोई अभियोजन नहीं चलाया जा सकता था जिन पर जुर्माना लगाया गया था। 1961 के अधिनियम के तहत, समान तथ्यों पर जुर्माना लगाया जा सकता है और मुकदमा चलाया जा सकता है। दूसरा परिवर्तन यह है कि 1922 के अधिनियम के तहत, आयकर अधिकारी निरीक्षण सहायक आयुक्त की पूर्व मंजूरी के बिना कोई जुर्माना नहीं लगा सकता था। 1961 के अधिनियम के तहत इस तरह के पूर्व अनुमोदन की आवश्यकता नहीं है। तीसरा, 1922 के अधिनियम में दंड की कोई न्यूनतम राशि निर्धारित नहीं की गई थी। 1961 के अधिनियम के अनुसार, जुर्माना निर्धारित न्यूनतम से कम नहीं हो सकता है। यह निश्चित रूप से कमी करने की आयुक्त की शक्ति के अधीन है। चौथा, आयकर अधिकारी द्वारा जारी सूचना के अनुपालन में विवरणी दाखिल करने में विफलता के मामले में लगाए जाने वाले अधिकतम दंड को 1961 के अधिनियम के तहत कम कर दिया गया है। अंत में, 1922 के अधिनियम में दंड आदेश पारित करने के लिए कोई समय सीमा नहीं थी, लेकिन 1961 के अधिनियम

के तहत धारा 275 द्वारा दो वर्ष की अवधि निर्धारित की गई है जैसा कि ऊपर कहा गया है। इस प्रकार, जबकि 1922 के अधिनियम के तहत एक चूक करने वाले निर्धारिती को अभियोजन के मामले में कुछ सुरक्षा प्राप्त थी, 1961 के अधिनियम के तहत ऐसा कोई सुरक्षा प्रदान नहीं किया गया है; लेकिन जुर्माने की अधिकतम राशि जो लगाई जा सकती है, को कम कर दिया गया है और एक दंड आदेश पारित करने के लिए सीमा की अवधि निर्धारित की गई है जो एक चूक करने वाले निर्धारिती के लिए विशिष्ट लाभ की है। अपीलार्थियों की ओर से इस सुझाव को स्वीकार करना संभव नहीं है कि 1961 के अधिनियम में निहित दंड से संबंधित मूल और प्रक्रियात्मक प्रावधान पूरी तरह से कठिन हैं।

अब 1961 का अधिनियम 1 अप्रैल, 1962 को लागू हुआ। इसने 1922 के पूर्व अधिनियम को निरस्त कर दिया। जब भी कोई पूर्व अधिनियम निरस्त किया जाता है और नए प्रावधान अधिनियमित किए जाते हैं, तो विधायिका हमेशा यह निर्धारित करती है कि किस अधिनियम के तहत लंबित कार्यवाही जारी रखी जाएगी और समाप्त की जाएगी। सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 6 किसी अधिनियम के निरसन के प्रभाव से संबंधित है और इसके प्रावधान तब तक लागू होते हैं जब तक कि कानून में कोई अलग इरादा दिखाई न दे। यह विधायिका को तय करना है कि किसी विशेष कानून को किस तारीख से लागू किया जाना चाहिए। यह विवादित नहीं है और कोई कारण नहीं बताया गया है कि लंबित कार्यवाही को विधायिका द्वारा अनुच्छेद 14 के उद्देश्य के लिए एक वर्ग के रूप में क्यों नहीं माना जा सकता है। धारा 297 (2) के खंड (च) और (छ) के प्रयोजन के लिए विधायिका द्वारा चुनी गई तारीख, 1 अप्रैल, 1962 को मनमाना या काल्पनिक नहीं माना जा सकता है। यह वह तिथि है जिस पर 1961 का अधिनियम वास्तव में लागू हुआ था। 1961 के अधिनियम के अनुप्रयोग और कार्यान्वयन के लिए, एक तारीख और कार्यवाहियों का चरण निर्धारित करना आवश्यक था जो इस प्रावधान के लिए लंबित थे कि उन्हें किस अधिनियम द्वारा शासित किया जाएगा। हाथीसिंह मैन्युफैक्चरिंग के अनुसार। कंपनी। सीमित। v. भारत संघ (4) राज्य को किसी भी व्यक्ति को कानून के समक्ष समानता या कानूनों के समान संरक्षण से वंचित करने से निस्संदेह प्रतिबंधित किया गया है, लेकिन एक ऐसी कानून लागू करके जो आम तौर पर उन सभी व्यक्तियों पर लागू होती है जो उस तारीख से इसके दायरे में आते हैं जिस पर यह सक्रिय हो जाता है, कोई भेदभाव नहीं किया जाता है। इसमें हालांकि औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 25 (1) के संदर्भ में, जैसा कि 1957 के अधिनियम 18 द्वारा अंतःस्थापित किया गया था, उन नियोक्ताओं के बीच अंतर किया गया था जिन्होंने 27 नवंबर, 1956 को या उससे पहले अपने उपक्रम बंद कर दिए थे और जिन्होंने उस तारीख के बाद ऐसा किया था, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि अनुच्छेद 14 का उल्लंघन नहीं किया गया था।

अपीलार्थियों की ओर से तर्कों के अनुसार अनुच्छेद 14 आकर्षित है क्योंकि जो वर्गीकरण किया गया है वह मूल्यांकन के पूरा होने की तारीख की दुर्घटना के आधार पर विशुद्ध रूप से मनमाना है। इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि जुर्माने की गणना कर निर्धारण के अनुसार की जानी चाहिए। यह इस प्रकार है कि मूल्यांकन पूरा होने के बाद ही जुर्माना लगाया जा सकता है। इस कारण से खंड (च) और (छ) में यह उपबंध करने का पूरा औचित्य था कि निर्धारण के पूरा होने की तारीख उस अधिनियम का निर्धारक होगी जिसके अधीन दंड की कार्यवाही की जानी थी। यह हो सकता है कि विधायिका ने विचार किया कि निर्धारण के मामले में और धारा 297 (2) के खंड (ए) और (बी) के तहत एक अलग उपचार दिया जाना चाहिए, जब आय की वापसी 1922 के अधिनियम या 1961 के अधिनियम को लागू करने के उद्देश्य से निर्णायक बना दी गई थी। लेकिन केवल इसलिए कि विधायिका ने अपने विवेक से दंड से संबंधित कार्यवाहियों को एक अलग व्यवहार देने का निर्णय लिया है, खंड (च) और (छ) में किए गए

वर्गीकरण के संबंध में भेदभाव खोजना मुश्किल है जो खंड (क) और (छ) से स्वतंत्र हैं। (b). यद्यपि जुर्माने को एक निश्चित अर्थ में और कुछ उद्देश्यों के लिए एक अतिरिक्त कर के रूप में माना गया है, यह अभिनिर्धारित करना संभव नहीं है कि जुर्माने की कार्यवाही अनिवार्य रूप से मूल्यांकन से संबंधित कार्यवाही की निरंतरता है जहां एक विवरणी दाखिल की गई है।

जालान ट्रेडिंग कं. (पी) लिमिटेड बनाम मिल मजदूर यूनियन (5) में बहुमत का निर्णय शायद ही कोई समानता प्रदान करता है। वहां बोनस भुगतान अधिनियम, 1965 का पूर्वव्यापी प्रवर्तन, जो 29 मई, 1965 को लागू हुआ था, धारा 33 द्वारा किया गया था, जिसके प्रावधानों को 1962 से किसी लेखा वर्ष से संबंधित बोनस के भुगतान के संबंध में किसी विवाद के उस तारीख को लंबित होने पर निर्भर करने के लिए अनुच्छेद 14 का उल्लंघन माना गया था। वर्ष 1962 का स्पष्ट रूप से उस तारीख से कोई संबंध नहीं था जिस दिन अधिनियम लागू हुआ था जो 29 मई, 1965 थी।

यह अच्छी तरह से तय है कि राजकोषीय अधिनियमों में विधायिका को वर्गीकरण के मामले में एक बड़ा विवेकाधिकार है, जब तक कि इस नियम से कोई विचलन नहीं है कि एक वर्ग में शामिल व्यक्तियों को विशेष उपचार के लिए अलग नहीं किया जाता है। यह कहना संभव नहीं है कि 1961 के अधिनियम में निहित दंड के प्रावधानों को उन व्यक्तियों के मामलों में लागू करते समय, जिनके आकलन 1 अप्रैल, 1962 के बाद पूरे हो गए हैं, किसी भी वर्ग को विशेष उपचार के लिए चुना गया है। यह स्पष्ट है कि जुर्माने के अधिरोपण के लिए निर्धारण वर्ष या विवरणी दाखिल करने की तिथि महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि यह आयकर अधिकारियों का संतोष है कि निर्धारिती द्वारा चूक की गई है जो जुर्माने से संबंधित प्रावधानों को आकर्षित करेगा। किसी भी स्तर पर संतोष प्राप्त किया जाए, 1961 के अधिनियम की धारा 274 (1) और 275 की योजना यह है कि जुर्माना लगाने का आदेश निर्धारण के पूरा होने के बाद किया जाना चाहिए। इसलिए, दंड के प्रयोजनों के लिए महत्वपूर्ण तिथि, इस तरह के पूरा होने की तारीख है।

इस तर्क को समझना भी उतना ही कठिन है क्योंकि किसी विशेष तिथि तक निर्धारण पूरा करना आयकर अधिकारी पर निर्भर करता है, यह उसके आदेश पर निर्भर करेगा कि जुर्माना 1922 के अधिनियम के तहत या 1961 के अधिनियम के तहत लगाया जाना चाहिए या नहीं। ऐसा कोई अनुमान नहीं है कि जिन अधिकारियों या अधिकारियों को कराधान कानूनों के तहत जिम्मेदार कर्तव्य सौंपे गए हैं, वे उनका उचित तरीके से और ईमानदारी से निर्वहन नहीं करेंगे। यदि किसी विशेष मामले में कोई दुर्भावनापूर्ण कार्रवाई की जाती है, तो उसे हमेशा एक निर्धारिती द्वारा उचित कार्यवाही में चुनौती दी जा सकती है, लेकिन केवल इस संभावना से कि कोई अधिकारी जानबूझकर किसी मामले के निपटारे में देरी कर सकता है, अनुच्छेद 14 के तहत खंड (जी) को भेदभावपूर्ण के रूप में निरस्त करने के लिए शायद ही कोई आधार हो सकता है। गोपीचंद सरजुप्रसाद बनाम भारत संघ (6) और आय-कर अधिकारी, ए वार्ड, आगरा बनाम फर्म मदन मोहन दम्मा मल (7) के सहमति निर्णयों में हमारा स्पष्ट मत है कि उस खंड को अधिनियमित करने में कोई भेदभाव नहीं किया गया था जो अनुच्छेद 14 के अनुप्रयोग को आकर्षित करेगा। किया गया वर्गीकरण प्राप्त किए जाने के उद्देश्य से उचित संबंध रखने वाले बोधगम्य अंतर पर आधारित है। इसका उद्देश्य अनिवार्य रूप से कर की चोरी को रोकना था।

हम आगे इस बात से सहमत होने में असमर्थ हैं कि धारा 271 की भाषा उस धारा के तहत कार्यवाही करने की गारंटी नहीं देती है जब 1922 के अधिनियम की धारा 22 (2) के तहत जारी नोटिस का पालन करने में विफलता के कारण कोई चूक की गई हो। यह सत्य है कि धारा 271 की उपधारा (1) के खंड (क) में 1961 के अधिनियम के संगत उपबंधों का उल्लेख है, लेकिन यह अभिनिर्धारित किए जाने पर

कि धारा 297 (2) (छ) मामले को नियंत्रित करती है, जुर्माने के संदाय से संबंधित भाग को लागू नहीं करेगा। दोनों धाराओं 271 (1) और 297 (2) (छ) को एक साथ और सामंजस्य में पढ़ा जाना चाहिए और इसलिए पढ़ा जाना चाहिए, एकमात्र संभव निष्कर्ष यह है कि 31 मार्च, 1962 को समाप्त होने वाले वर्ष के लिए या किसी पूर्ववर्ती वर्ष के लिए, जो अप्रैल, 1962 के पहले दिन के बाद पूरा हो जाता है, किसी निर्धारण के संबंध में दंड अधिरोपित करने के लिए कार्यवाहियां आरंभ की जानी चाहिए और दंड 1961 के अधिनियम की धारा 271 के उपबंधों के अनुसार अधिरोपित किया जाना चाहिए। इस प्रकार निर्धारिती 1922 के अधिनियम की धारा 28 (1) में उल्लिखित चूक के लिए धारा 271 (1) द्वारा प्रदान किए गए दंड के लिए उत्तरदायी होगा यदि उसका मामला धारा 297 (2) की शर्तों के भीतर आता है।(g). हम 1961 के अधिनियम की धारा 297 (2) (जे) के संदर्भ में तृतीय आय-कर अधिकारी, मंगोलौर बनाम दामोदर भट (8) में इस न्यायालय के निर्णय का उपयोगी रूप से उल्लेख कर सकते हैं। इसके अनुसार, 1922 के अधिनियम के अधीन अधिरोपित कर और जुर्माने की वसूली की कार्यवाही में उस धारा के अंतर्गत आने वाले मामले में, यह आवश्यक नहीं है कि वसूली या संग्रहण से संबंधित नए अधिनियम की सभी धाराओं को शाब्दिक रूप से लागू किया जाए, लेकिन केवल वही धाराएं लागू होंगी जो विशेष मामले में उपयुक्त हैं और यदि आवश्यक हो तो उपयुक्त संशोधनों के अधीन होंगी। दूसरे शब्दों में, नए अधिनियम की प्रक्रिया नए अधिनियम की धारा 7 (2) (जे) द्वारा विचार किए गए मामलों पर लागू होगी। इसी प्रकार, यदि 1961 के अधिनियम की धारा 271 उस अधिनियम की धारा 297 (2) (छ) के साथ सहमति के लिए उत्परिवर्तनों को लागू करेगी।

(8) मैंने इस बात पर जोर देने के लिए कि इस मामले को उस न्यायालय द्वारा पहले ही सुलझा लिया गया है, सर्वोच्च न्यायालय के उनके लॉर्डशिप के निर्णय से व्यापक रूप से उद्धृत करने की स्वतंत्रता ली है। यदि धारा 297 (2) (छ) की व्याख्या पर, जैसा कि इस मामले में निर्धारिती के वकील द्वारा प्रतिवाद किया गया है, दंड 1961 अधिनियम की धारा 271 के तहत अधिरोपित नहीं किया जा सकता था और इसे 1922 अधिनियम की धारा 28 के तहत अधिरोपित किया जाना था, तो भेदभाव के संबंध में पूरी चर्चा अनावश्यक थी। निर्धारिती के वकील ने तर्क दिया है कि अपीलार्थी के विद्वान वकील द्वारा उनके लॉर्डशिप के समक्ष केवल एक धारणा की गई थी कि जुर्माना 1961 अधिनियम की धारा 271 के तहत लगाया जाना था, जिसने भेदभाव पैदा किया। लेकिन किसी भी पक्ष द्वारा यह तर्क नहीं दिया गया कि ऐसा नहीं था और उनके अधिपतियों ने उस विवाद को स्वीकार कर लिया और यह पता लगाने के लिए इसकी जांच की कि क्या उस व्याख्या पर धारा 297 (2) (छ) ने संविधान के अनुच्छेद 14 के प्रावधानों का उल्लंघन किया है। यदि केवल 1922 के अधिनियम की धारा 28 के प्रावधान निर्धारिती के दोनों समूहों पर लागू थे, तो किसी भी भेदभाव का कोई सवाल ही नहीं था और पूरी चर्चा अनावश्यक थी। उनके प्रभुओं ने यह भी माना कि जुर्माना लगाने का आदेश मूल्यांकन के पूरा होने के बाद किया जाना था और इसलिए, मूल्यांकन के पूरा होने की तारीख का चयन मनमाना नहीं था, लेकिन वास्तव में काफी उचित था। उनके प्रभुओं ने यह भी माना कि 1961 के अधिनियम में निहित दंड से संबंधित मूल और प्रक्रियात्मक प्रावधान कठिन नहीं थे। इस चर्चा में एक प्रकार से यह निर्णय लिया गया कि धारा 297 (2) (छ), जो धारा 271 को लागू करती है और 1961 के अधिनियम की उन मामलों में, जिनमें निर्धारण 1 अप्रैल, 1962 के पश्चात् पूरा किया गया था, दंड अधिरोपित करने से संबंधित अन्य धाराएं संविधान के अनुच्छेद 20 (1) के उपबंधों से प्रभावित नहीं थीं, वह याचिका जिसका निर्धारिती के अधिवक्ता द्वारा हमारे समक्ष पुरजोर आग्रह किया गया है। इसके अलावा हमें यह मान लेना चाहिए कि धारा 297 (2) (छ) के अधिकारों का निर्धारण करते समय उनके अधिपतियों ने संविधान के अनुच्छेद 20 (1) के उल्लंघन या अन्यथा सहित सभी पहलुओं से इस मामले पर विचार किया। बल्लभदास मथुरा दास लाभानी और अन्य बनाम नगरपालिका समिति, मलकापुर (9) में उनके अध्यक्षों द्वारा यह

अभिनिर्धारित किया गया था कि उच्चतम न्यायालय का निर्णय उच्च न्यायालय के लिए बाध्यकारी है और उच्च न्यायालय इस आधार पर इसकी उपेक्षा नहीं कर सकता कि सुसंगत उपबंधों को उच्चतम न्यायालय के संज्ञान में नहीं लाया गया था।

(9) आयकर आयुक्त के विद्वत वकील ने निम्नलिखित मामलों का भी उल्लेख किया है जिनमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि 1961 अधिनियम की धारा 297 (2) (छ) संविधान के अनुच्छेद 20 (1) के उपबंधों का उल्लंघन नहीं करती है, जैसा कि निर्धारिती के लिए उसके वकील द्वारा प्रतिवाद किया गया हैः -

(I) शक्ति ऑफसेट वर्क्स, v. सहायक आयकर आयुक्त, नागपुर और अन्य (10) (Bombay High Court).

(2) इंद्र एंड कंपनी बनाम भारत संघ और एक अन्य (राजस्थान उच्च न्यायालय) परिशिष्ट सं। 1 शक्ति ऑफसेट वर्क्स मामला (10) (supra).

(3) पी. उम्माली उम्मा बनाम सहायक आयकर आयुक्त और अन्य का निरीक्षण (केरल उच्च न्यायालय) परिशिष्ट सं. 2 शक्ति ऑफसेट वर्क्स मामला (10) (supra).

(10) इसलिए, हम निर्धारिती के तर्क को स्वीकार नहीं करते हैं, जैसा कि उसके वकील द्वारा प्रस्तुत किया गया है और यह मानते हैं कि निर्धारिती पर जुर्माना लगाया जाना चाहिए, जिनके निर्धारण 1 अप्रैल, 1962 से पहले के निर्धारण वर्षों के लिए उस तारीख के बाद पूरे किए जाते हैं, उस तारीख के बावजूद, जिस तारीख को रिटर्न दाखिल किया गया था या चूक के आयोग की तारीख जिसके लिए जुर्माना लगाया जा सकता है, 1961 अधिनियम की धारा 271 से 275 के प्रावधानों के अनुसार और 1922 अधिनियम की धारा 28 के प्रावधानों के अनुसार नहीं।

(11) हम वकील के तर्क पर भी संक्षेप में विचार कर सकते हैं-"निर्धारिती के लिए कि यदि प्रश्न के हमारे उत्तर के परिणामस्वरूप आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण द्वारा पहले से लगाए गए दंड को बढ़ाया जाता है, तो यह संविधान के अनुच्छेद 20 (1) के प्रावधानों का उल्लंघन करेगा। वह अनुच्छेद बाद के कार्य द्वारा किसी अपराध के लिए दंड के प्रावधान से संबंधित है जो अपराध किए जाने के समय मौजूद दंड से अधिक है। 1922 के अधिनियम के तहत आयकर अधिकारी को लगाए गए कर के 10 गुना तक जुर्माना लगाने का अधिकार क्षेत्र था। वर्तमान मामले में लगाए गए कर के 40 प्रतिशत तक का जुर्माना उस सीमा के भीतर था और उस जुर्माने को न्यायाधिकरण द्वारा 1961 के अधिनियम के प्रावधानों की गलत व्याख्या पर कम कर दिया गया था। संविधान के अनुच्छेद 20 का उल्लंघन तब नहीं होता जब किसी गलत आदेश को ठीक किया जाता है।

(12) उपर्युक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, निर्णय के लिए हमें निर्दिष्ट प्रश्न का हमारा उत्तर सकारात्मक, अर्थात् आयकर आयुक्त के पक्ष में और निर्धारिती के विरुद्ध है। आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण अब ऊपर की गई टिप्पणियों के आलोक में एक आदेश पारित करेगा। मामले की परिस्थितियों में, हम पक्षों को उनकी लागत वहन करने के लिए छोड़ देते हैं।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

आदित्य सैनी

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

रेवाडी (**हरियाणा)**